International Journal of Literacy and Education

E-ISSN: 2789-1615
P-ISSN: 2789-1607
Impact Factor: 5.69
IJLE 2022; 2(1): 121-125
www.educationjournal.info
Received: 17-12-2021
Accepted: 13-02-2022

अरुण कुमार
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
अरुण कुमार
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

शिक्षा के राजनीतिक स्वर - एक भारतीय परिप्रेक्ष्य

अरुण कुमार

DOI: https://doi.org/10.22271/27891607.2022.v2.i1b.48

सारांश
भारतीय परंपरा एवं संस्कृति ने शिक्षा को प्रारंभ से ही मुक्ति का मार्ग माना गया है-' सा विद्या या विमुक्तये' । शिक्षा किसी भी समाज का ऐसा अभिन्न तत्व है जिसके अभाव में किसी सभ्य अथवा प्रबुद्ध समाज को संकल्पित करना असंभव है। यह ना केवल प्रत्येक व्यक्ति को प्रभावित करता है वरन समाज को संचालित एवं नियंत्रित करने का भी एक यंत्र है। इसके साथ ही यह समाज को दिशा देने का कार्य करती है।

परंतु, शासन व्यवस्थाओं ने स्वयं को वैध एवं सुदृढ़ बनाने के लिए शिक्षा को एक प्रभावी यंत्र के रूप में चिह्नित किया है- उत्तर वैदिक काल में ब्राह्मणवादी वर्चस्व, मध्यकाल में धार्मिक वर्चस्व एवं ब्रिटिश काल में लोक-सेवा वर्चस्वकारी संरचना शैक्षणिक नियंत्रण पर ही आधारित थी। शिक्षा का शाब्दिक अर्थ सीखने-सिखाने की प्रक्रिया से है, जिसमें किसी प्रकार की ज्ञान की रचना एवं उसका प्रसार सम्मिलित होता है। उत्तर आधुनिक चिंतकों में मिशेल फ़ूको द्वारा 'ज्ञान को शक्ति' कहा गया है, जिसका अभिप्राय है कि सत्ता की संरचना, ज्ञान की संरचना पर आधारित है। दूसरी ओर नव-मार्क्सवादी चिंतक एंटोनिओ ग्राम्शी नागरिक-समाज की भूमिका में शिक्षा संस्थानों को सम्मिलित करते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि शिक्षा (सॉफ्ट पावर) को राज्य-सत्ता (हार्ड पावर) द्वारा स्वयं की सत्ता को स्थायित्व प्रदान करने हेतु कालांतर से प्रयोग जारी है।

कूट शब्दः शिक्षा, राजनीति, राजनीतिक समाजीकरण, लोकतांत्रिक मूल्य, भारतीयकरण।

प्रस्तावना
विभिन्न काल-खंडों में राज्य सरकारों/शासन व्यवस्थाओं ने स्वयं की राजनीतिक वैचारिकी अथवा शासन व्यवस्था को दीर्घजीवी बनाने के लिए शिक्षा को एक राजनीतिक यंत्र के रूप में प्रयोग किया। उदाहरणार्थ औपनिवेशिक काल में पुर्तगालियों द्वारा सर्वप्रथम मिशनरी विद्यालयों की स्थापना, तत्पश्चात औपनिवेशिक शासन व्यवस्थाओं द्वारा भारत की शिक्षा व्यवस्था को निम्नतर बताकर यहाँ के साहित्य को कमजोर रूप से प्रस्तुत किया तथा स्वयं के साहित्य को भारत पर थोपने एवं समस्त शिक्षा व्यवस्था का औपनिवेशीकरण करना इसी दिशा में एक कदम था कि किस प्रकार से यहाँ की शिक्षा व्यवस्था पर नियंत्रण कर स्वयं की शिक्षा व्यवस्था का वैधीकरण किया जाए।

औपनिवेशिक प्रभाव में शिक्षा
औपनिवेशिक काल से यदि हम विश्लेषित करें तो यह पाते हैं कि उस समय शिक्षा को अपनी शासन व्यवस्था को बचाए एवं बनाए रखने के एक साधन के रूप में प्रयोग किया गया। औपनिवेशिक शासन काल में सर्वप्रथम यहाँ की शैक्षिक एवं सांस्कृतिक व्यवस्थाओं को अपने अनुकूल परिवर्तित करने का कार्य किया गया। चाहे मिशनरी विद्यालयों की स्थापना के द्वारा ईसाई धर्म के प्रचार प्रसार का कार्य किया गया हो अथवा अंग्रेजी

माध्यम से शिक्षा को बढ़ावा देने का कार्य हो। औपनिवेशिक शासन व्यवस्थाओं ने सर्वप्रथम बौद्धिक वर्चस्व के द्वारा स्वयं के शासन के वैधीकरण का कार्य किया। इसके लिए उन्होने शिक्षा को ही आधार बनाया जो कि आम जनमानस के समीप होती है। यदि शिक्षा एवं शैक्षिक पाठ्यक्रम के द्वारा बौद्धिक वर्चस्व की स्थापना करने में सफल हो जाते हैं तो स्वयं के शासन को स्थायित्व प्रदान किया जा सकता है। इस परिप्रेक्ष्य में शिक्षा का प्रयोग दो प्रकार से किया गया - एक, बौद्धिक अथवा सांस्कृतिक वर्चस्व के द्वारा औपनिवेशिक शासन का वैधीकरण तथा दो, एक ऐसे विशिष्ट शिक्षित वर्ग का निर्माण जो शासन को सुचारु रूप से चलाने में उनकी सहायता कर सके।[1] अर्थात जो दिखने में भारतीय हो परंतु अपनी सोच एवं कार्यात्मक शैली से पूर्ण रूप से ब्रिटिश हो। इस प्रक्रिया के द्वारा मानसिक दासता के मध्यम से शासन को स्थायित्व देने का प्रयास किया गया। इस विषय में महादेवी वर्मा कहती हैं कि 'यह निर्विवाद है कि कोई विजेता विजित देश पर शासन मात्र का अधिकार पाकर संतुष्ट नहीं होता। वह विजित पर सांस्कृतिक विजय भी चाहता है, जिसका सहज माध्यम शिक्षा ही रही है। प्रशासित देश में शिक्षा का उद्देश्य वही नहीं हो सकता जो स्व-शासित देश के लिए आवश्यक है'।[2]

परंतु जैसा ऊपर वर्णन किया गया है शिक्षा सदैव मुक्ति का मार्ग ही प्रशस्त करती है, चाहे वह आत्मिक मुक्ति हो अथवा भौतिक। अंग्रेजी शिक्षा ने भारतीय व्यक्तियों को इस योग्य बनाया जिसके माध्यम से वे उन आधुनिक साहित्यों को पढ़ने योग्य हुए जो आधुनिक लोकतांत्रिक मूल्यों यथा स्वतंत्रता, समानता एवं न्याय को प्रोत्साहन करते देते हैं। इन साहित्यों ने भारतीयों की लोकतांत्रिक चेतना को दृढ़ किया जिससे वे पराधीनता से मुक्ति प्राप्त करने की ओर अग्रसर हुए। औपनिवेशिक शासन व्यवस्थाओं द्वारा दी गई शिक्षा से प्रेरित होकर राष्ट्र ने आंदोलित होकर अपनी मुक्ति के लिए संघर्ष किया जिसके कारण अंततः राष्ट्र को स्वतंत्रता प्राप्त हुई।

स्वातंत्र्योत्तर भारत में नागरिकीकरण की प्रक्रिया में शिक्षा

स्वातंत्र्योत्तर भारत में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था को आत्मसात किया गया तथा इसे सुदृढ़ करने एवं दीर्घकालिक बनाने का उत्तरदायित्व उस समय की केंद्र सरकार द्वारा पुनः शिक्षा व्यवस्था को ही दिया गया। यद्यपि संविधान लागू कर दिया गया था परंतु इस लोकतांत्रिक व्यवस्था एवं संविधान को चिरस्थायी एवं दीर्घजीवी बनाने के लिए आवश्यक था कि संविधान के मूल्यों का प्रवाह आम-जन तक हो। अंबेडकर का भी यही मानना था कि संविधान को लागू करना एक लोकतांत्रिक प्रक्रिया है, परंतु इसका समाजीकरण करने का कार्य भी स्वयं में एक चुनौती है। अतः शिक्षा को ही संविधान के समाजीकरण का उपकरण बनाया गया। विभिन्न समयों पर केंद्र सरकार द्वारा लाई गई नीतियाँ/योजनाएँ एवं आयोग, जो भी शिक्षा से संबंधित थे, उनके विश्लेषण से परिलक्षित होता है कि इन सभी का कार्य, समाज में लोकतांत्रिक मूल्यों एवं नागरिक तत्वों की सीख देकर एक ऐसे नागरिक का निर्माण करना था जो संवैधानिक मूल्यों को आत्मसात करे।

संविधान के मूल्य जैसे पंथ-निरपेक्षता, समाजवाद, समानता, स्वतंत्रता, बंधुता, नागरिकों में वैज्ञानिक चेतना का बोध, ये समस्त कार्य शिक्षा के माध्यम से ही लाने के प्रयास किए गए। सरकार द्वारा शिक्षा व्यवस्था में सुधार के लिए समय-समय पर बनाए गए आयोगों, जैसे- राधाकृष्णन आयोग (1948), मुदालियर आयोग (1952), कोठारी आयोग (1964) एवं विभिन्न शिक्षा नीतियाँ- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1979, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1992 (1986 की नीति का संशोधित रूप) तथा विभिन्न पाठ्यचर्याओं तथा पाठ्यक्रमों के द्वारा उपरोक्त वर्णित नागरिक मूल्यों को प्रवाहित करने का कार्य किया गया। एनसीईआरटी की पुस्तकों में प्रथम पृष्ठ पर संविधान की उद्देशिका का वर्णन तथा नागरिक कर्तव्यों का वर्णन भी इसी दिशा में एक प्रयास के रूप में देखा जा सकता है।

यह एक सामान्य तथ्य है कि शिक्षा व्यक्ति के समाजीकरण का प्रारंभिक उपकरण होती है। व्यक्ति के सामाजिक-राजनीतिक विचार एवं व्यवहार की निर्मिति में उसे दी जाने वाली शिक्षा का व्यापक प्रभाव पड़ता है। लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं में 'लोग' ही शक्ति व सत्ता का स्रोत होते हैं, अतः उनकी सामाजिकी व राजनीतिक व्यवहार को प्रभावित व एक सीमा तक निर्धारित करने वाले वैचारिक उपकरणों पर अपना वर्चस्व रखे बिना राज्य-सत्ता पर लंबे समय तक बना नहीं रहा जा सकता।[3] अतः भारत में भी जहाँ एक ओर शिक्षा संवैधानिक मूल्यों

[1] डोनाल्ड बी रोज़ेंथल. (1974). एजुकेशनल पॉलिटिक्स एंड पब्लिक पॉलिसी मेकिंग इन महाराष्ट्र, इंडिया. *कम्पेरेटिव एजुकेशन रीव्यु*, 18(1), 79-95.

[2] 'शिक्षा और राजनीति' (2016), शंकर शरण और विजय कुमार द्वारा संपादित पुस्तक में अध्याय 'महादेवी का शिक्षा चिंतन' 53-64.

[3] एस आल्थ्यूजर. (2018). विचारधारा और राज्य के वैचारिक उपकरण. सुरेशचंद्र शुक्ल व कृष्ण कुमार में, *शिक्षा का समाजशास्त्रीय संदर्भ (सं.)* (पृ. 111-118). नई दिल्ली: ग्रंथ शिल्पी.

एवं लोकतांत्रिक व्यवस्था को सुदृढ़ करने का एक माध्यम बनी, वहीं दूसरी ओर यह शासन व्यवस्था को न्यायोचित ठहराने एवं उसकी राजनीतिक वैचारिकी को पोषित करने का यंत्र भी बनती चली गई।

शिक्षा एवं राजनीति

शिक्षा नीतियों के जिन संवैधानिक उद्देश्यों के साथ राष्ट्र आगे बढ़ा था उन उद्देश्यों की प्राप्ति में हम कहाँ तक सफल रहे? यदि इस दिशा में हमें सफलता प्राप्त नहीं हुई है तो क्यों? यह एक शोचनीय विषय है।

औपनिवेशिक भारत में शिक्षा उपनिवेशीकरण की प्रक्रिया, जिसमें मैकाले प्रस्ताव (1834), वुड डिस्पैच (1854), हंटर कमीशन (1882), ईसाई मिशनरियों का धर्मांतरण, प्राच्यवादी ज्ञान की औपनिवेशिक व्याख्या, ब्रिटिश सेवाओं में पक्षपाती भर्तियाँ इत्यादि ब्रिटिश गतिविधियों को "वाइट कैडर" रचना का आधार थी। जिसने ब्रिटिश उपनिवेश के बुद्धिजीवियों का कार्य करते हुए ब्रिटिश संप्रभुता को वैधता प्रदान करने की दिशा में कार्य किया। शैक्षिक उपनिवेशीकरण ने ब्रिटिश संप्रभुता को स्थायीकारी बल प्रदान करने के साथ ही भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को ब्रिटिश दिशा भी प्रदान की, जिसकी परिणति सांप्रदायिक दंगे तथा भारतीय विभाजन के रूप में हुई। विभाजन की विभीषिका के बावजूद भी स्वतंत्रता का जशन अनिवार्य था, पंडित जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में 'स्वतंत्रता दिवस चिर-प्रतिक्षित भाग्य वधू से भेंट थी, अब समय संपूर्ण ऊर्जा एवं उत्साह को राष्ट्रीय एकीकरण, लोकतत्रं एव समावेशी विकास में सचिंत किए जाने का काल था। विशाल लोकतंत्र के अतंर्गत भारतीय सरकार का केंद्र लक्ष्य नागरिक निर्माण की प्रक्रिया को संविधानिक गति देना था। इस दिशा में अनेकों शैक्षणिक प्रयास किए गए जिसमें राधाकृष्णन आयोग, मुदालियर आयोग, कोठारी कमीशन जैसी गहन समितियों ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति को रूपरेखा दी। प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा नीति अर्थात स्वतंत्र भारत की शैक्षिक वास्तुकारिता के अंतर्गत स्वतंत्रता, बंधुता, समाजवाद पंथनिरपेक्ष, लोकतंत्र, समानता, संप्रदायिकता का उन्मूलन, वैज्ञानिक चेतना, नागरिकता जैसे रंगों को समाहित किया गया परंतु समय के साथ इन रंगों की चमक धूमिल पड़ती गई और उस पर राजनीतिक वैचारिकता का रंग हावी होने लगा और एक बार पुनः उत्तर औपनिवेशिक भारत में राजनीतिक औपनिवेशिकता शैक्षिक तंत्र पर हावी दिखे।

उपरोक्त विवरण के अतिरिक्त एक अन्य पक्ष को विश्लेषित किया जाना चाहिए कि किस प्रकार शिक्षा के द्वारा पाठ्यक्रमों के माध्यम से राजनीतिक समाजीकरण/वैचारिकी की प्रक्रिया को अंजाम देने का प्रयास किया जाता है। डोनाल्ड बी रोज़ेंथल (1974) अपने लेख *एजुकेशनल पॉलिटिक्स एंड पब्लिक पॉलिसी मेकिंग इन महाराष्ट्र, इंडिया* में वर्णित करते हैं कि शिक्षा नीतियों का निर्माण होते समय समाज के कई महत्वपूर्ण अवयव जैसे जाति, समुदाय, ग्रामीण तथा शहरी समुदाय उन नीतियों को काट-छांट करने अथवा अपने अनुसार परिवर्तित कराने के पक्ष में रहता है जिनमें समाज के कुछ अभिकर्ता अथवा संस्थाएं जैसे शैक्षिक नौकरशाह, निजी विद्यालय प्रबंधन प्रभावी राजनीतिक दल तथा अन्य राजनीतिक नेता सम्मिलित होते हैं। इनका प्रयास रहता है कि शैक्षिक पाठ्यक्रम, गतिविधियों अथवा नीतियों का निर्माण इस प्रकार हो कि ना केवल सामाजिक रूप से वरन् राजनीतिक रूप से भी ये वर्ग लाभान्वित हों।

इस विश्लेषण के लिए राज्य के नव-मार्क्सवादी दृष्टिकोण को समझना आवश्यक है, जिनके अनुसार राज्य की अधिसंरचना उसके आधार द्वारा निर्धारित होती है। जिसमें राज्य पूर्ण रूप से स्वायत्त ना होकर आंशिक स्वायत्त होते हैं, अर्थात जिस प्रकार का आधार (नागरिक समाज, बुद्धिजीवी वर्ग, नौकरशाह) होगा उसी प्रकार से राज्य की संरचना का निर्धारण होता है। इस स्थिति में राज्य द्वारा किए जाने वाले कार्य तथा उसके द्वारा लिए जाने वाले निर्णयों पर उपरोक्त वर्गों का प्रत्यक्ष प्रभाव देखा जा सकता है। इससे राज्य की स्वायत्तता पूर्ण ना होकर आंशिक होती है।

इसी प्रकार शिक्षा नीतियों के निर्माण, क्रियान्वयन तथा पाठ्यक्रम तथा पाठ्यचर्या के निर्धारण में समाज के विशिष्ट वर्ग, समूह अथवा संगठन अपनी विचारधारा के अनुरूप कार्य करते हैं। फिलिप जी आलबाश (1978) अपने लेख *द पॉलिटिसाइज़ेशन ऑफ इंडियन एजुकेशन* में लिखते हैं कि सरकारों का उच्च शिक्षण संथाओं पर अत्यधिक हस्तक्षेप बना रहता है तथा राज्य सरकारें शिक्षा नीतियों एवं नियमों का निर्माण इस प्रकार से करवाती हैं जिससे कि उनके राजनीतिक हितों एवं उद्देश्यों की पूर्ति हो सके। जिससे कि इनके द्वारा निर्मित पाठ्यक्रम अथवा पाठ्यचर्या के द्वारा उसी वैचारिकी का प्रवाह समाज में हो जैसा स्वरूप ये समाज को प्रदान करना चाहते हैं। इसका एक उदाहरण केरल है जहाँ कुछ जातिगत एवं पांथिक समुदाय विशेष रूप से मुस्लिम समाज, शैक्षिक समुदायों को नियंत्रित एवं संचालित करने का कार्य करती है।[4] मैसूर में लिंगायत समुदाय का प्रभुत्व

[4] ग्लिन वुड. (1969). प्लानिंग, लोकल इंटरेस्ट एंड हायर एजुकेशन इन इंडियन स्टेट. *अनपब्लिश्ड पीएचडी डिज़र्टेशन*. एमआईटी.

भी शिक्षण संस्थाओं में देखने को मिलता है।[5] रूडोल्फ तथा रूडोल्फ (1972) भी *एजुकेशन एंड पॉलिटिक्स इन इंडिया: स्टडीज़ इन ओर्गेनाइज़ेशन, सोसाइटी एंड पॉलिसी* में शिक्षा एवं राजनीति के मध्य संबंधों को उजागर करने का प्रयास करते हैं तथा राजनीति एवं शिक्षा के मध्य ध्यानाकर्षित करते हैं। इनके अनुसार सरकारों द्वारा शिक्षा से संबंधित समस्त महत्वपूर्ण पदों, जिसमें मंत्री पद से लेकर शिक्षा सचिवों तथा विश्वविद्यालयों के कुलपतियों कि नियुक्ति भी सम्मिलित है, पर उन्हीं व्यक्तियों की नियुक्ति की जाती है जो उनके एजेंडा को आगे बढ़ाने में सहायक सिद्ध हों।

औपनिवेशिक काल एवं उत्तर-औपनिवेशिक काल में दी जाने वाली शिक्षा का उद्देश्य क्रमशः *व्हाइट कैडर* तथा नागरिक बनाने पर था। वर्तमान 21वीं शताब्दी में एक बार पुनः नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति की इमारत रची जा रही है, जिसका उद्घोष *स्ट्रांग स्टेट* रचना को समर्पित है। इसके अंतर्गत हम सत्तारूढ़ सरकार के राजनीतिक विचार, एकता और शैक्षिक वास्तुकला के समीकरण को देख सकते हैं, जिसके माध्यम से नई शिक्षा नीति 2020 की भावी रणनीति और परिणति में राजनीतिक वैचारिकता की भूमिका की छाप भी दिखाई देती है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय (वर्तमान में शिक्षा मंत्रालय), भारत सरकार द्वारा लाई गई नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के अध्ययन से यह समझ बनती है कि यह अतीत की समस्त शिक्षा नीतियों से एक कदम और आगे बढ़ते हुए नागरिकता से भारतीयता तथा भारतीयता से विश्व नागरिक बनाने की ओर एक प्रयास है। उक्त शिक्षा नीति के अध्ययन के उद्देश्यों को 'I³'— Indigenization (स्वदेशीकरण), Indianization (भारतीयकरण), एवं Internationalization (अंतर्राष्ट्रीयकरण) के रूप में समझा जा सकता है। इस नीति में भारतीय ज्ञान प्रणाली, आदिवासी ज्ञान एवं सीखने के स्वदेशी तौर तरीके, पाठ्यक्रमों में स्थानीय संदर्भों की विविधता, स्थानीय भाषा शिक्षण, स्थानीय परिवेश के लिए सम्मान, स्थानीय शिक्षिका एवं शिक्षक जहां स्वदेशीकरण के प्रतीक के तौर पर देखे जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त इस शिक्षा नीति में प्राचीन शिक्षा व्यवस्था, भारतीय विश्वविद्यालयों, एवं भारतीय शिक्षा मूल्यों से विकसित शिक्षा प्रणाली एवं देशज संस्कृति को विशिष्ट स्थान प्रदान किया गया है। जिसे नागरिकों में भारतीयता के भाव को समावेशित करने के प्रयास के रूप में देखा जा सकता है, इसके जरिये नागरिकों में भारतीयता का भाव, देश के प्रति गौरव, भारतीय जड़ों से जुड़े रहकर उससे निरंतर प्रेरणा पाना मुख्य है। इसके अतिरिक्त शिक्षा नीति में इंडोलॉजी, भारतीय भाषा, आयुष चिकित्सा पद्धति, योग, कला-संगीत, इतिहास, संस्कृति तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रासंगिक पाठ्यक्रम के माध्यम से 'विश्व-गुरु' बनने की संकल्पना पर बल दिया गया है और वैश्विक नागरिक की संकल्पना को मूर्त रूप देने की ओर बल दिया गया है। यह विभिन्न भाषाओं के माध्यम से विश्व संस्कृति को आत्मसात करने का प्रयास करती है, जो भारतीय शिक्षा को अंतर्राष्ट्रीयकरण की ओर उन्मुख करने के लक्ष्य पर केंद्रित है।

वर्तमान नई शिक्षा नीति (NEP-2020) को प्रारंभ हुए एक वर्ष से अधिक हो गया है। यद्यपि इतने लघु समय में किसी भी शिक्षा नीति के अंतर्निहित उद्देश्यों एवं व्यावहारिकता का ज्ञान होना संभव नहीं है। परंतु, वर्तमान शिक्षा नीति के विभिन्न बिंदुओं एवं शब्दावलियों का अध्ययन करने से यह ज्ञात होता है कि वर्तमान सरकार/शासन व्यवस्था ने पुनः शिक्षा व्यवस्था को एक ऐसे यंत्र के रूप में प्रयोग किया है, जिसमें यह शिक्षा-व्यवस्था 'नागरिकीकरण की प्रक्रिया' से 'भारतीयकरण की प्रक्रिया' में रूपांतरित होती प्रतीत हो रही है। जहाँ पूर्व की समस्त शिक्षा नीतियाँ/योजनाएँ समाज को नागरिकता के मूल्यों की ओर ले जाने की प्रक्रिया के रूप में प्रतीत हो रही थी, वहीं वर्तमान शिक्षा नीति का उद्देश्य नागरिकों में भारतीय संस्कृति, भारत के गौरवशाली प्राचीन इतिहास आदि के मूल्यों को पुनर्स्थापित कर नागरिकता से 'भारतीयता' की ओर ले जाने के कदम के रूप में प्रतीत होता है। पूर्व की शिक्षा नीतियों के अनुभवों के आधार पर यह भी विश्लेषित किया जा सकता है कि यह नीति भविष्य में अपने लक्ष्यों की प्राप्ति में कितनी सफल रहती है। साथ ही यह भी अवलोकित किया जाना चाहिए कि इस शिक्षा नीति के माध्यम से वर्तमान सरकार अपनी वैचारिकी के अनुरूप सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, भारतीयता, अंतर्राष्ट्रीयता के जिन लक्ष्यों को इस शिक्षा नीति में सम्मिलित किया गया है उनकी प्राप्ति संभव है अथवा क्या सरकार उस दिशा में सफल हो सकेगी? क्योंकि भारत में शिक्षा एवं शैक्षिक संस्थानों में राजनीतिक हस्तक्षेप एवं नियंत्रण इस दिशा में.

[5] टी एन मदान, व बी जी हाल्बर. (1972). कास्ट एंड कम्युनिटी इन द प्राइवेट एंड पब्लिक एजुकेशन ऑफ मैसूर स्टेट. लॉयड आई रूडोल्फ, व सुज़ेन एच रूडोल्फ में, *एजुकेशन एंड पॉलिटिक्स इन इंडिया: स्टडीज़ इन ओर्गेनाइज़ेश, सोसाइटी एंड पॉलिसी* (पृ. 121-147). दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस.

संदर्भ-सूची

1. Altbach PG. The Politicization of Indian Education. Change. 1978;10(2):19-21. Retrieved April 8, 2021, from https://www.jstor.org/stable/40163122

2. Baxi U, Mohan D. Education and Politics. India International Centre Quarterly. 1990;17(2):39-62.
3. Bell Daniel. The End of Ideology: On the Exhaustion of Political Ideas in the Fifties. The Free Press.
4. Bhattacharya N. Teaching History in Schools: The Politics of Textbooks in India. History Workshop Journal, spring. 2009;67:99-110. Retrieved March 9, 2021, from https://www.jstor.org/stable/40646212
5. Deenamal O. Ideology and Education, Andhra University Press, 1982.
6. Haq E. School, Family and Media, Rawat, Jaipur, 1995.
7. Lieten GK. Education, ideology and politics in Kerala 1957-59. Social Scientist. 1977, 3-21.
8. Prasad B, Singh SP. (Eds.). Aspects of Education and Politics in India. Swarna Prakashan, Patna, 1983.
9. Rosenthal DB. Educational Politics and Public Policymaking in Maharashtra, India. Comparative Education Review. 1974;18(1): 79-95.
10. Rudolph SH, Rudolph LI. Education and Politics in India: Studies in Organization, Society and Policy. New Delhi: Oxford University Press, 1972.
11. Singh C. National Policy on Education. New Delhi: Dominant Publishers and Distributers, 2005.
12. Voice of the nation: Organizer, New Delhi, Dr. Chirsthu Doss. 2021;08(73):7.
13. Yadav MS, Nikalje VM. National Curriculam Framework: A Historical Perspective. New Delhi: NCERT, 2009.
14. आदित्य मुखर्जी, मृदुला मुखर्जी, तथा सुचेता महाजन. आरएसएस, स्कूली पाठ्यपुस्तकें और महात्मा गांधी की हत्या: हिंदू सांप्रदायिक परियोजना. (सौरभ बाजपेयी, अनु.) नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन इंडिया प्रा॰ लि॰, 2018.
15. एनसीईआरटी. शिक्षा के लक्ष्य (राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र), 2007.
16. कुमार कृष्ण. राज, समाज और शिक्षा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1990.
17. कुमार कृष्ण. शैक्षिक ज्ञान और वर्चस्व, ग्रंथ शिल्पी, दिल्ली, 1998.
18. मोहंती मनोरंजन. भारत में स्नातक शिक्षा का संकट, परिप्रेक्ष्य, अगस्त 2018, वर्ष-25, अंक-2, दिल्ली.
19. राजपूत जगमोहन. 'स्कूल तो हैं पर शिक्षक नहीं', जनसत्ता, 13 अक्तूबर, नयी दिल्ली, 2021.
20. शरण शंकर, कुमार विजय. शिक्षा और राजनीति, अनन्य प्रकाशन, 2016.
21. शुक्ल सुरेश चंद्र, कुमार कृष्ण. (संपादित). शिक्षा का समाजशास्त्रीय संदर्भ, ग्रंथ शिल्पी, दिल्ली. 2018.